स्वामी विवेकानन्द की दार्शनिक एवं शैक्षिक विचारधारा

डा. सावित्री तड़ागी,

एसोसिएट प्रोफेसर/विभागाध्यक्ष (शिक्षा शास्त्र),
विद्यान्त हिन्दू पी.जी. कालेज, लखनऊ।

जीवन परिचय

विवेकानन्द का जन्म 12 जनवरी सन् 1863 में कोलकाता के शिमला मोहल्ले में विश्वनाथ दत्त तथा भुवनेश्वरी के प्रथम पुत्र के रूप में हुआ था। इनका नाम नरेन्द्र नाथ था।यह बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। विज्ञान का छात्र होते हुए भी इनकी काव्य और दर्शन में अत्यधिक रुचि थी। बहुमखी प्रतिभा के व्यक्ति थे। पश्चिम के स्टुअर्ट मिल और हर्बट स्पेन्सर के दार्शनिक सिद्धान्तों का इन्होंने गम्भीर अध्ययन किया था। इनके कॉलेज के प्रधानाचार्य श्री हेस्टी उनकी प्रतिभा से इतने अधिक प्रभावित थे कि उन्होंने कहा था कि मैंने अब तक बहुत प्रतिभाशाली व्यक्ति देखे हैं किन्तु नरेन्द्र की भॉति प्रतिभासम्पन्न छात्र मुझे आज तक नहीं मिला। श्री हेस्टी ने ही नरेन्द्र को एक बार रामकृष्ण परमहंस से मिलने की प्रेरणा दी। वह रामकृष्ण परमहंस के पास पहुँचे और पूछा, क्या आपने ईश्वर को देखा है? परमहंस ने उत्तर दिया हॉ, वैसे ही जैसे मैं तुमको देख रहा हूँ, और यह कहते ही उन्होंने दाहिना चरण नरेन्द्र के शरीर पर रख दिया। चरण के रखते ही नरेन्द्र को लगा कि सारा संसार घूम रहा है और एक शून्य में समाता जा रहा है। नरेन्द्रनाथ भय से चीख पड़े। रामकृष्ण ने हॅसते हुए कहा, 'अच्छा अब शान्त हो जाओ'। इस एक घटना ने नरेन्द्र नाथ को पूर्ण रूप से बदल दिया। धीरे–धीरे वह रामकृष्ण परमहंस के निकट सम्पर्क में आते गये। उसके बाद से निरन्तर वे अपने गुरु के उपदेशों का प्रचार करते रहे और उनकी मृत्यु के बाद उनके आध्यात्मिक उत्तराधिकारी बन गये।

गुरु की आध्यात्मिक शिक्षा के लिये समर्पित होने पर घर–बार छोड़कर वे संन्यासी बन गये और बड़ानगर में एक आश्रम की स्थापना करके गरु के सन्देश का प्रचार करने लगे। अपनी पहचान छिपाने के लिये अनेक बार अपना नाम बदलते रहे और अन्त में 'सर्वधर्म सम्मेलन' में भाग लेने के लिये अमेरिका जाते समय इन्हाने अपना नाम विवेकानन्द रखा। कालान्तर में इसी नाम से सारे संसार में विख्यात हुये। अमेरिका में इनके भाषणों की अत्यधिक प्रशंसा हुई। इन्होंने यूरोप के अनेक देशों, विशेष रूप से इंग्लैण्ड तथा अमेरिका की अनेक बार यात्रायें की और विदशों में हिन्दू धर्म तथा वेदान्त का सन्देश दिया। स्वामी विवेकानन्द ने भारत वापस आकर 'वेल्लूर मठ' और 'अद्वैत आश्रम' की स्थापना की, जहाँ से भारतवासियों और सम्पूर्ण विश्व को मानव सेवा और ईश्वर पूजा के सन्देश जाते रहे। 4 जुलाई, सन् 1902 ई० में इस महान आत्मा ने संसार से विदा ली।

दार्शनिक विचारधारा

स्वामी विवेकानन्द कट्टर वेदान्ती थे। वे वेदों और उपनिषदों द्वारा निर्देशित ज्ञान पर पूरी आस्था रखते थे। उन्होंने वेदान्त दर्शन को व्यवहारिक रूप दिया। उनका विश्वास था कि धर्म केवल पूजा पाठ से सम्भव नहीं होता वरन् मनुष्यत्व एवं सत्यनिष्ठा से ही सम्भव होता है। ईश्वर से मिलने के लिए मंदिर, मस्जिद जाना आवश्यक नहीं है, वरन् कृषि क्षेत्र तक वह सभी

स्थल निष्काम कर्म द्वारा सेवा की जा सकती है। पूजा के स्थल हैं।

विवेकानन्द को ईश्वर को तीन गुणों से सम्पन्न मानते हैं। यह तीन गुण है– ईश्वर की सर्वव्यापकता, सर्वगुणसम्पन्ना और सर्वसुख सम्पन्नता, विवेकानन्द के अनुसार, इन तीनों गुणों के समन्वय से ही आत्मा परमात्मा के साथ एकीकृत हो जाती है।

स्वामी विवेकानन्द ने वेदान्त को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करते हुए कहा था कि वस्तुतः वेदान्तिक और वैज्ञानिक समान सिद्धान्तों पर आस्था रखते थे। उदाहरण देते हुए उन्होंने कहा था कि ''जब विज्ञान का शिक्षक कहता है कि सब पदार्थों में एक ही अणुशक्ति विद्यमान है, तो क्या यह सोचना अस्वाभाविक होगा कि चर–अचर, जड़–चेतन सभी में ईश्वर की शक्ति विद्यमान है? दूसरा उदाहरण ''अग्नि'' का है, जिसके अनेक रूप हैं, पर मूल रूप में ''अग्नि'' एक ही है। इसी प्रकार इनका तीसरा उदाहरण ''आत्मा'' का है जो मूल रूप में एक होते हुए भी अनेक रूपों में दिखाई देती है।

स्वामी विवेकानन्द ने धार्मिक क्षेत्र में वैज्ञानिक अनुसंधान प्रणाली का प्रयोग करने पर बल दिया। उनका मत है कि धार्मिक निष्कर्षों को वैज्ञानिक अनुसंधान प्रणाली की कसौटी पर कस कर सिद्ध किया जा सकता है। आज के प्रयोगवादी युग में मनुष्य को आत्मा परमात्मा की एकता का ज्ञान देने के लिए यह प्रणाली सर्वाधिक उपयोगी है।

वेदान्ती होने के नाते स्वामी विवेकानन्द का मानना है कि समस्त प्राणियों में एक ही आत्मा का निवास है। अन्तर केवल रूप का है। जैसे बालक और प्रौढ़ के शरीर में छोटे और बड़े का अन्तर होता है। विवेकानन्द विश्व बन्धुत्व का समर्थन करते हैं। उनका कहना था कि मनुष्य में ही ईश्वर का रूप देखा जा सकता है। किन्तु यह रूप उनके शरीर में नहीं वरन उसकी आत्मा में है, अतः प्रेम तथा सेवा से आत्मा का दर्शन सभी प्राणियों में किया जा सकता है। इसके लिए आवश्यक है कि पहले अपने भीतर के एक परमात्मा पर श्रद्धा और विश्वास किया जाय। यह आत्म विश्वास ही व्यक्ति को धार्मिक बनाता है और उसको परमात्मा से मिलाता है। विवेकानन्द उसी को नास्तिक कहते हैं, जिसे स्वयं अपने अंदर स्थित आत्मा और परमात्मा पर श्रद्धा और विश्वास नहीं है। उनके अनुसार यह श्रद्धा स्वार्थ पर आधारित श्रद्धा और विश्वास नहीं है। ''जिसका अर्थ है ''सभी प्राणियों में श्रद्धा, क्योंकि सभी प्राणी एक ही हैं''

विश्व बन्धुत्व की भॉति ही विवेकानन्द विश्व धर्म को भी मान्यता देते हैं। वे सभी धर्मों को मानव जाति के कल्याण हेतु साधन मानते हैं। उनका मत था कि मुक्ति और ब्रह्मज्ञान मानव जीवन का परम लक्ष्य है। किन्तु कोई भी व्यक्ति केवल कुछ क्षणों तक ही ब्रह्म में लीन रह सकता है। शेष समय में उसे जगत के सभी प्राणियों की सेवा करनी चाहिए, क्योंकि मूल रूप से सभी में एक ही आत्मा का वास है। विवेकानन्द मानव प्राणी को स्वयं में पूर्ण मानते थे और कहते थे कि अमरता तो प्राणी में ही निहित है उसे बाहर की ओर खोजना व्यर्थ है।

स्वामी विवेकानन्द की शैक्षिक विचारधारा

स्वामी विवेकानन्द का शिक्षा दर्शन स्वामी विवेकानन्द जी ऐसे परम्परागत व्यवसायिक तकनीकी शिक्षा शास्त्री न थे जिन्होने शिक्षा का क्रमबद्ध सुनिश्चित विवरण दिया हो। वह मुख्यतः एक दार्शनिक, देशभक्त, समाज सुधारक और दिव्यात्मा थे। जिनका लक्ष्य अपने देश और समाज की खोयी हुई जनता को जगाना तथा उसे नव निर्माण के पथ पर अग्रसर करना था। शिक्षा दर्शन के क्षेत्र में स्वामी जी की तुलना विश्व के महानतम शिक्षा शास्त्रियों प्लेटो, रूसो और

बर्टैंड रसेल से की जा सकती है क्योंकि उन्होंने शिक्षा के कुछ सिद्धान्त प्रस्तुत किए है जिनक आधार पर विशाल ज्ञान का भवन निर्माण तकनीकी रूप से कर सकते हैं।

स्वामी विवेकानन्द की नस–नस में भारतीयता तथा आध्यात्मिकता कूट–कूट कर भरी हुई थी। अतः उनके शिक्षा दर्शन का आधार भा भारतीय वेदान्त या उपनिषद ही रहे। उनका मुख्य उददेश्य था मानव का नव निर्माण क्योंकि व्यक्ति समाज का मूल आधार हा व्यक्ति के सर्वागीण उत्थान से समाज का सर्वार्गीण उत्थान होता ह और व्यक्ति के पतन से समाज का पतन होता है स्वामी जी ने अपने शिक्षा दर्शन में व्यक्ति और समाज दोनो के समरस संतुलित विकास को ही शिक्षा का प्रमुख लक्ष्य माना, स्वामी जी के अनुसार वेदान्त दर्शन में प्रत्येक बालक में असीम ज्ञान और विकास का सम्भावना है परन्तु उन्हें इन शक्तियों का पता नहीं है। शिक्षा द्वारा उसे इनकी प्राप्ति करवाई जाती है तथा उनके उत्तरोतर विकास में छात्र की सहायता की जाती है स्वामी जी वेदांती थे इसलिए वे मनुष्य को जन्म से पूर्ण मानते थे और इस पूर्णता की अभिव्यक्ति को ही शिक्षा कहते थे। स्वामी जी के शब्दों में "मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को व्यक्त करना ही शिक्षा है। स्वामी विवेकानन्द शिक्षा के विषय में कहते है कि सच्ची शिक्षा वह है जिससे मनुष्य की मानसिक शक्तियों का विकास हो। वह शब्दों को रटना मात्र नहीं है। वह व्यक्ति की मानसिक शक्तियों का ऐसा विकास है, जिससे वह स्वयंमेव स्वतंत्रतापूर्वक विचार कर सही निर्णय कर सकें।

इक्कसवीं शब्ताबदी के बदलते परिवेश में जहों सूचना और प्रौद्योगिकी का युग चल रहा हैं ऐसे में स्वामी जी के चिन्तन को अपनाना आवश्यक हैं। स्वामी जी शिक्षा के वर्तमान रूप को अभावात्मक बताते थे जिनके विद्यार्थियों को अपनी संस्कृति का ज्ञान नहीं उन्हें जीवन के वास्तविक मूल्यों का पाठ नहीं पढ़ाया जा सकता तथा उनमें श्रद्धा का भाव भी नहीं पनपता है। उनके अनुसार भारत के पिछड़ेपन के लिए वर्तमान शिक्षा पद्धति ही उत्तरदायी है यह शिक्षा न तो उत्तम जीवन जीने की तकनीक प्रदान करती है और न ही बुद्धि का नैसर्गिक विकास करने में सक्षम हैं। स्वामी जी ने आधुनिक शिक्षा पद्धति की आलोचना करते हुए लिखा है– "ऐसा प्रशिक्षण जो नकारात्मक पद्धति पर आधारित हो, मृत्यु से भी बुरा हैं। स्वामी विवेकानन्द भारतीयों के लिए पाश्चात्य दृष्टिकोण से प्रभावित शिक्षा पद्धति के स्थान पर भारतीय गुरूकुल पद्धति को श्रेष्ठ मानते थे जिसमें विद्यार्थियों तथा शिक्षकों में निकटता के संबंध तथा सम्पर्क रह सके और विद्यार्थियों में श्रद्धा, पवित्रता, ज्ञान, धैर्य, विश्वास, विनम्रता, आदर आदि गुणों का विकास हो सके। स्वामी जी भारतीय शिक्षा पाठ्यक्रम में दर्शनशास्त्र एवं धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन को भी आवश्यक मानते थे वे ऐसी शिक्षा के समर्थक थे जो संकीर्ण मानसिकता तथा भेदभाव साम्प्रदायिकता के दोषों से मुक्त हो। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा का मूल उद्देश्य, जिसमें व्यक्ति का सर्वागीण विकास हो। उत्तम चरित्र, मानसिक शक्ति और बौद्धिक विकास हो, जिससे व्यक्ति पर्याप्त मात्रा में धन अर्जित कर सके और आपात काल के लिए धन संचय कर सके।

शिक्षा दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त

स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त निम्नलिखित हैं–

- शिक्षा ऐसी हो जिससे बालक का शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक विकास हो सके।
- शिक्षा ऐसी हो जिससे बालक के चरित्र का निर्माण हो, मन का विकास हो, बुद्धि विकसित हो तथा बालक आत्मनिर्भर बने।

- बालक एवं बालिका को समान शिक्षा देनी चाहिए।
- धार्मिक शिक्षा, पुस्तकों द्वारा न देकर आचरण एवं संस्कारों द्वारा देनी चाहिए।
- शिक्षा से बालक के चरित्र का गठन हो, मन का बल बढ़े तथा बुद्धि विकसित हो जिससे वह अपने पैरों पर खड़ा हो जाये।
- शिक्षा बालक में आत्मिक निष्ठा तथा श्रद्धा विकसित करें एवं उसमें आत्मत्याग की प्रगति करके पूर्णता की अभिव्यक्ति करे।
- पाठ्यक्रम में लौकिक एवं पारलौकिक दोनों प्रकार के विषयों को स्थान देना चाहिए।
- शिक्षा, गुरू गृह में प्राप्त की जा सकती है।
- शिक्षक एवं छात्र सबंधं अधिक से अधिक निकट का होना चाहिए।
- सर्वसाधारण में शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार किया जाना चाहिए।
- देश की प्रगति के लिए तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था की जाए।
- मानवीय एवं राष्ट्रीय शिक्षा परिवार से ही शुरू करनी चाहिए।

शिक्षा के उद्देश्य

शिक्षा के उद्देश्य के सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द यह विचार व्यक्त करते हैं कि शिक्षा द्वारा आत्मविश्वास की भावना उत्पन्न की जानी चाहिए। शिक्षा का मुख्य ध्येय छात्र में ''उत्तिष्ठत, जागृत प्राप्य वरान्निबोधत'' अर्थात ''उठो, जागो और तब तक न रूको जब तक अपन घ्येय की पूर्ति न कर लो'' की भावना विकसित करना है। उनके अनुसार शिक्षा के उद्देश्य निम्नलिखित होने चाहिए–

पूर्णता को प्राप्त करने का उददेश्य–स्वामी जी के अनुसार शिक्षा का प्रथम उद्देश्य अन्तर्निहित पूर्णता को प्राप्त करना हैं। उनके अनुसार लौकिक तथा आध्यात्मिक सभी ज्ञान मनुष्य के मन में पहले से ही विद्यमान रहते हैं। इस पर पडे आवरण को उतार देना ही शिक्षा हैं। इस लिए शिक्षा ऐसी हो जिससे मनुष्य के अन्तर्निहित ज्ञान अथवा पूर्णता की अभिव्यक्ति हो सके।

शारीरिक एवं मानसिक विकास का उद्देश्य– विवेकानन्द जी के अनुसार शिक्षा का दूसरा उद्देश्य बालक का शारीरिक एवं मानसिक विकास है। शारीरिक उद्देश्य पर उन्होंने इस लिए बल दिया जिससे आज के बालक भविष्य में निर्भिक एवं योद्धा के रूप में गीता का अध्ययन करके देश की उन्नति कर सकें। मानसिक उद्देश्य पर बल देते हुए उन्होंने बताया कि हमें ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जिसे प्राप्त करके मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो जाये।

नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास का उद्देश्य– स्वामी जी का विश्वास था कि किसी देश की महानता केवल उसके संसदीय कार्यों से नहीं होती अपितु उसके नागरिको की महानता से होती है और नागरिको को महान् बनाने के लिए उनका नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास परम आवश्यक है अतः शिक्षा को नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास पर बल देना चाहिए।

आत्मविश्वास तथा श्रद्धा एवं आत्मत्याग की भावना का उद्देश्य– स्वामी जी ने आजीवन इस बात पर बल दिया कि अपने ऊपर विश्वास रखना, श्रद्धा तथा आत्मत्याग की भावना को विकसित करना शिक्षा का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। उन्होंने लिखा है– ''उठो जागो और उस समय तक बढते रहो जय तक कि चरम उददेश्य की प्राप्ति न हो जाये।''

विभिन्नता में एकता की खोज का उददेश्य– स्वामी जी के अनुसार शिक्षा का मुख्य उददेश्य विभिन्नता में एकता की खोज करना है। उन्होंने

बताया कि आध्यात्मिक तथा भौतिक जगत एक ही है अतः शिक्षा ऐसी हो जो बालक को विभिन्नता में एकता की अनुभूति करना सीखाए।

धार्मिक विकास का उद्देश्य – स्वामी जी चाहते थे कि प्रत्येक व्यक्ति उस सत्य एवं धर्म को ज्ञात कर सके जो उसके अन्दर छिपा हुआ है। इसके लिए उन्होंने मन तथा हृदय के प्रशिक्षण पर बल दिया और बताया कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिसे प्राप्त करके बालक अपने जीवन को पवित्र बना सके तथा उसमें आज्ञापालन, समाजसेवा एवं महापरूषों और सन्तों के अनुकरणीय आदशों को अपनाने की क्षमता विकसित हो जाये।

शिक्षण विधियाँ

स्वामीजी द्वारा पश्चिमी शिक्षण पद्धतियों के स्थान पर व्यावहारिक शिक्षा पर बल दिया गया और भारत की उसी प्राचीन आध्यात्मिक शिक्षण पद्धति को अपनाने पर बल दिया जिसमें गुरू और शिष्य के सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ठ रहते हैं, यथा– •

अनुकरण विधि –विवेकानन्द का मत था कि बच्चा अनुकरण द्वारा सीखता है। अतः अध्यापक को बच्चे के समक्ष उन गुणों का आदर्श प्रस्तुत करना चाहिए जिन्हें वह उसमें विकसित करना चाहता है।

एकाग्रता – उन्होंने आत्मानुभूति को जीवन का मुख्य उद्देश्य बताया। इसके लिए चित्त की एकाग्रता आवश्यक है। अन्य विषयों का ज्ञान भी अच्छी प्रकार से तभी प्राप्त किया जा सकता है जब बच्चा अपने मन को पूरी तरह एकाग्र करे।

व्याख्यान विधि – विवेकानन्द प्रभावशाली वक्ता थे। उनके व्याख्यान लोगों के दिल व दिमाग पर बहुत गहरा असर करते थे। अतः उनके अनुसार व्याख्यान विधि द्वारा भी बच्चों को बहुत कुछ सिखाया जा सकता है।

परिचर्चा विधि – विवेकानन्द का विचार था कि परिचर्चा या वाद–विवाद विधि का प्रयोग करके बच्चों में ज्ञान का विकास किया जा सकता है।

अनुभव द्वारा सीखना – उन्होंने तकनीकी व औद्योगिक शिक्षा को बहुत महत्त्व दिया। इन विषयों की शिक्षा के लिए उन्होंने अपने अनुभव पर आधारित विधियों का प्रयोग करने का सुझाव दिया।

इसके अतिरिक्त उन्होंने व्यक्तिगत मार्गदर्शन व परामर्श विधि का भी समर्थन किया। उनका मत था कि यात्रा व भ्रमण द्वारा भी बच्चों को बहुत कुछ सीखने का मौका मिल सकता है।

बालक का स्थान – फ्रोबेल की भॉति स्वामी जी ने भी बालक को शिक्षा का केन्द्र बिन्दु माना तथा बताया कि बालक लौकिक तथा आध्यात्मिक सभी प्रकार के ज्ञान का भण्डार होता हैं। इसलिए बालक को स्वयं विकसित होने का सुझाव देते हुए कहा– ''अपने अन्दर जाओ और उपनिषदों को अपने में से बाहर निकालो। तुम सबसे महान् पुस्तक हो जो कभी थी अथवा होगी। जब तक अन्तरात्मा नहीं खुलती, समस्त बाह्य शिक्षण व्यर्थ है।''

शिक्षक का स्थान –स्वामी जी को स्वयं शिक्षा में विश्वास था। वे कहते थे कि हम में से प्रत्येक व्यक्ति अपना स्वयं शिक्षक हैं। अतः शिक्षक के स्थान पर प्रकाश डालते हुए स्वामी जी कहते हैं कि शिक्षक एक दार्शनिक, मित्र तथा पथ–प्रदर्शक है जो बालक को अपने ढंग से अग्रसर होने के लिए सहायता प्रदान करता है।

जन साधारण की शिक्षा – स्वामी जी ने तत्कालीन भारतीय समुदाय की आर्थिक दृष्टि से हीन दशा को सुधारने के लिए जन साधारण की शिक्षा पर बल दिया और कहा–''मैं जन–साधारण की अवहेलना करना महान् राष्ट्रीय पाप समझता हूँ। यह हमारे पतन का मुख्य कारण है। जब तक भारत की सामान्य जनता को एक बार फिर

उपयुक्त शिक्षा, अच्छा भोजन तथा अच्छी सुरक्षा नहीं प्रदान की जायेगी तब तक प्रत्येक राजनीति बेकार सिद्ध होगी।'' देश की वर्तमान व भविष्य में आने वाली परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए हमें अपनी वर्तमान शिक्षा प्रणाली में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करने की महत्ती आवश्यकता है। हमें ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो समय के अनुकूल हो।

बाल विवाह का विरोध – विवेकानन्द जी ने बाल–विवाह की भर्त्सना की और कहा, बाल विवाह मे असामयिक सत्तानोत्पति होती है और अल्पायु में संतान धारण करने के कारण हमारी स्त्रियाँ अल्पायु होती हैं, उनकी दुर्बल और रोगी संताने देश में भिखारियों एवं अपराधियों की संख्या बढ़ाने का कारण बनती है।

आत्मविश्वास पर बल – विवेकानंद जी ने स्वयं पर विश्वास करने की प्रेरणा दी। आत्मविश्वास रखने पर ही व्यक्ति में कुछ करने की क्षमता विकसित होती है और आत्मविश्वासी समाज ही समस्त बाधाओं को लॉघकर ऊपर उठता हैं। विवेकानंद जी ने कहा ''लोग कहते हैं– इस पर विश्वास करो, उस पर विश्वास करो, मैं कहता – पहले अपने आप पर विश्वास करो। सर्वशक्ति तुम में है–कहो हम सब कर सकते हैं।''

व्यवसायिक विकास पर बल – भारत एक निर्धन देश है और यहाँ कि अधिकांश जनता मुश्किल से ही अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति कर पाती है। स्वामी जी ने इस तथ्य एवं सत्य को हृदयंगम किया तथा यह अनुभव किया कि कोरे आध्यात्म से ही जीवन नहीं चल सकता जीवन चलाने के लिए कर्म आवश्यक है। इसके लिए उन्होंने शिक्षा के द्वारा मनुष्य को उत्पादन एवं उद्योग कार्य तथा अन्य व्यवसायों में प्रशिक्षित करने पर बल दिया।

पाठ्यक्रम

स्वामी विवेकानन्द द्वारा प्रस्तुत पाठ्यक्रम की योजना निम्न सिद्धांतों पर आधारित है–

- पाठ्यक्रम व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करने में सहायक हो।
- रोजगारपरक हो।
- लचीला एवं परिवर्तनीय हो।
- विषयों के साथ–साथ उसमें विभिन्न गतिविधियाँ भी शामिल हों। •
- कला तथा विज्ञान जैसे विषयों को उसमें स्थान दिया जाए।
- उसमें वेदांत व विज्ञान का समन्वय होना चाहिए।

इन सिद्धांतों के आधार पर उन्होंने पाठ्यक्रम में निम्न विषयों को रखे जाने का सुझाव दिया –

- वेदांत, धर्म तथा दर्शन आदि विषय
- अंग्रेजी, संस्कृत एवं मातृ–भाषा
- शारीरिक शिक्षा व व्यायाम आदि
- उद्योग/व्यवसाय की शिक्षा
- कला
- भूगोल, इतिहास, अर्थशास्त्र, गृह विज्ञान व मनोविज्ञान आदि।

निष्कर्ष

1817 स्वामी विवेकानन्द का विचार, दर्शन और शिक्षा अत्यंत उच्चकोटि के है, जीवन के मूल सत्यों, रहस्यों और तथ्यों को समझने की कुंजी है। उनके शब्द इतने असरदार है कि एक मुर्दे में भी जान फूॅक सकते हैं। वे मानवता के सच्चे प्रतीक थें, है और मानव जाति के अस्तित्व को जन साधारण के पास पहुंचाने का अभूतपूर्व कार्य किया। वे अद्वैत वेदांत के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने अपनी संस्कृति को जीवित रखने हेतु भारतीय संस्कृति के मूल अस्तित्व को बनाये रखने का आह्वान किया ताकि आने वाली भावी पीढ़ी

पूर्ण संस्कारिक, नैतिक गुणों से युक्त न्यायप्रिय, सत्यधर्मी और आध्यात्मिक तथा भारतीय आदर्श के सच्चे प्रतीक के रूप में विश्व में अपना वर्चस्व बनाए रखे। स्वामी विवेकानंद जी युग दृष्टा और युग सृष्टा थे। युगदृष्टा की दृष्टि से उन्होंने अपने समय की स्थिति को देखा समझा था और युगसृष्टा उस दृष्टि की उन्होंने नवभारत की नींव रखी थी। वे भारतीय धर्म दर्शन की व्यवस्था आधुनिक परिप्रेक्ष्य में करने, वेदांत को व्यवहारिक रूप देने एवं उसके प्रचार करने और समाज सेवा एवं समाज सुधार करने के लिए बहुत प्रसिद्ध है परंतु इन्होंने शिक्षा की आवश्यकता पर बहुत बल दिया और नवभारत के निर्माण के लिए तत्कालिन शिक्षा में सुधार हेतु अनेक सुझाव दिए। जवाहर लाल नेहरू जी ने भी उनके बारे में एक बार कहा था भारत के अतीत में अटल आस्था रखते हुए और भारत की विरासत पर गर्व करते हुए भी विवेकानंद जी का जीवन की समस्याओं के प्रति आधुनिक दृष्टिकोण था और वे भारत के अतीत तथा वर्तमान के बीच एक प्रकार के संयोजक थे। हमारे राष्ट्र की आत्मा झुग्गी में निवास करती है अतः शिक्षा के दीपक को घर–घर ले जाना होगा, तभी तो सारा जन समाज प्रबुद्ध हो सकेगा। शिक्षा मंदिर के द्वार सभी व्यक्तियों के लिए खोल दिए जाये, जिससे कोई भी अनपढ़ न रहें। शिक्षा आजाद हो। दृढ़ लगन और कर्म की शिक्षा ही जन समूह को उचित शिक्षा दिला सकती है। शिक्षा के द्वारा देश के विकास को चर्म पर ले जाए और सर्व धर्म के द्वारा सच्ची मानवता को अपनाकर ईश्वर की सेवा करे।

संदर्भ सूची

1. डा. आर.ए. शर्मा, शिक्षा के दार्शनिक एवं सामाजिक मूल आधार।
2. डा. पी.डी. पाठक, एवं जी.एस.डी. त्यागी, शिक्षा के दार्शनिक सिद्धान्त, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
3. डा. रमा शुक्ला, शैक्षिक विचार एवं व्यवहार, आलोक प्रकाशन, लखनऊ।
4. डा. राम शकल पाण्डेय, शिक्षा की दार्शनिक एवं समाज शास्त्रीय पृष्ठभूमिक, अग्रवाल पब्लिकेशन।
5. डा. सीताराम जायसवाल, शैक्षिक विचार एवं विधियॉ।
6. डा. एस.एस. माथुर, शिक्षा के दार्शिनिक तथा सामाजिक आधार, अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
7. स्वामी विदेहानन्द, शिक्षा का आदर्श, रामकृष्ण मठ, नागपुर।
8. स्वामी ब्रह्मस्थानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर।